International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

क्षेत्रीय इतिहास का राष्ट्रीयकरण: भंवरलाल नाथूराम लूणिया की शोध–दृष्टि और ऐतिहासिक प्रतिमान

राजेंद्र सिंह मेवाडा
रिसर्च स्कॉलर देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

1. प्रस्तावना

भारतीय इतिहास–लेखन के विशाल फलक पर क्षेत्रीय इतिहास को प्रायः मुख्यधारा के वृत्तांतों और राष्ट्रीय आख्यानों की छाया में ही देखा जाता रहा है। लंबे समय तक इतिहास–लेखन सत्ता के केंद्रों (जैसे दिल्ली या मगध) तक ही सीमित रहा, जिसके कारण क्षेत्रीय संघर्षों, स्थानीय संस्कृतियों और जन–आंदोलनों को वह राष्ट्रीय पहचान नहीं मिल सकी जिसके वे वास्तविक अधिकारी थे। परंतु, मध्य भारत और विशेषकर मालवा के संदर्भ में इस एकांगी धारणा को बदलने वाले अग्रणी विद्वानों में इतिहासकार प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया का नाम सर्वोच्च स्थान पर आता है। उनका यह अत्यंत स्पष्ट और अकाट्य मत था कि जब तक क्षेत्रीय इतिहास की नींव मजबूत नहीं होगी, तब तक राष्ट्रीय इतिहास का विशाल भवन सदैव अपूर्ण ही रहेगा। प्रो. बी.एन. लूणिया का क्षेत्रीय इतिहास के प्रति दृष्टिकोण केवल राजाओं की वंशावलियों या घटनाओं की तिथिवार सूची तैयार करना नहीं था। इसके विपरीत, वे इतिहास को एक जीवित, गतिशील और साक्ष्य–आधारित विधा मानते थे। उनके ऐतिहासिक दर्शन में 'क्षेत्र' मात्र एक भौगोलिक इकाई नहीं थी, बल्कि वह उन अनगिनत संघर्षों, सांस्कृतिक परंपराओं और बलिदानों की पवित्र भूमि थी, जिसने समग्र राष्ट्र–निर्माण में अपनी मौन आहुति दी थी। उन्होंने यह सिद्ध किया कि राष्ट्रीय इतिहास की जटिलताओं और उसकी समग्रता को समझने के लिए क्षेत्रीय इतिहास की गहराइयों का वैज्ञानिक अन्वेषण नितांत आवश्यक है। उनके इस प्रखर क्षेत्रीय इतिहास–बोध के निर्माण में नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ के संस्थापक और भारत के मूर्धन्य इतिहास–विद्वान महाराज कुमार रघुवीर सिंह जी का अत्यंत गहरा और प्रेरणादायी प्रभाव विद्यमान था। महाराज कुमार के इस वैचारिक निर्देश को कि ''मालवा के इतिहास के लिए छात्रों को तैयार करो, केवल गप्पबाजी से काम नहीं चलेगा,'' लूणिया जी ने अपने संपूर्ण अकादमिक जीवन का परम ध्येय बना लिया। इतिहास–लेखन में प्रो. लूणिया की सबसे बड़ी विशिष्टता प्राथमिक स्रोतों के प्रति उनकी अटूट निष्ठा थी। उन्होंने क्षेत्रीय इतिहास को लोक–कथाओं या द्वितीयक स्रोतों के धुंधलके से निकालकर ठोस पुरालेखीय साक्ष्यों की रोशनी में खड़ा किया। ग्वालियर, इंदौर, देवास और धार जैसी रियासतों के तहखानों में उपेक्षित पड़े 'मोड़ी लिपि' और मराठी भाषा के ऐतिहासिक दस्तावेजों, अदालती मुकदमों और डायरियों का उन्होंने न केवल अन्वेषण किया, बल्कि उनका अत्यंत सावधानीपूर्वक अनुवाद करवाकर उन्हें अकादमिक विमर्श का हिस्सा बनाया। उनकी इसी वैज्ञानिक शोध–प्रविधि ने मालवा के इतिहास विशेषकर 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में मालवा की जनजातियों (भील, भिलाला), बंजारों और स्थानीय जागीरदारों की भूमिका को राष्ट्रीय इतिहास की मुख्यधारा से जोड़ने का ऐतिहासिक कार्य किया। उन्होंने अपने शिष्यों (जैसे डॉ. जे.सी. उपाध्याय)

के माध्यम से मालवा के इतिहास पर विपुल शोध कार्य करवाकर एक ऐसी सुदृढ़ अकादमिक परंपरा की नींव रखी, जिसने मालवा को वैश्विक पटल पर प्रतिष्ठापित कर दिया।

प्रस्तुत शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य प्रो. बी.एन. लूणिया की इसी 'क्षेत्रीय शोध–दृष्टि' और उनके द्वारा स्थापित ऐतिहासिक प्रतिमानों का आलोचनात्मक व विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करना है। यह अध्ययन इस बात की मीमांसा करेगा कि किस प्रकार उन्होंने अपने साक्ष्य–आधारित अन्वेषण से मालवा के क्षेत्रीय इतिहास का 'राष्ट्रीयकरण' किया और इतिहास–लेखन को एक जन–केंद्रित व प्रामाणिक दिशा प्रदान की।

2. मालवा के इतिहास के प्रति अनुराग और वैचारिक प्रेरणा

किसी भी महान और विस्तृत राष्ट्र का प्रामाणिक इतिहास वास्तव में उसके विभिन्न अंचलों, जनपदों और क्षेत्रों के सूक्ष्म इतिहास का ही एक समेकित, जीवंत और वृहद स्वरूप होता है। प्रोफेसर बी.एन. लूणिया एक ऐसे दूरदर्शी अध्येता और युगदृष्टा थे, जिन्होंने इस अकादमिक सत्य को बहुत पहले ही पहचान लिया था कि जब तक हम स्थानीय जड़ों और क्षेत्रीय गौरव को अकादमिक धरातल पर पूर्ण प्रामाणिकता के साथ प्रतिष्ठित नहीं करेंगे, तब तक राष्ट्रीय इतिहास का चित्र सदैव अधूरा, एकांगी और निष्प्राण ही बना रहेगा। उन्होंने इतिहास की कक्षाओं और शोध–कार्यों को केवल साम्राज्यवादी, औपनिवेशिक या मात्र उत्तर भारत (दिल्ली/मगध) केंद्रित राजनीतिक विमर्शों तक सीमित नहीं रहने दिया। इसके विपरीत, उन्होंने मालवा की माटी की सुदीर्घ सांस्कृतिक सुगंध और यहाँ के गौरवशाली अतीत को अपने अध्ययन और अध्यापन का मुख्य केंद्र बिंदु बनाया। उनका यह दृढ़ और अकाट्य विश्वास था कि क्षेत्रीय इतिहास का गहन अन्वेषण ही वह एकमात्र वैज्ञानिक माध्यम है, जिससे हम जनसामान्य के वास्तविक संघर्षों, उनकी असाधारण सांस्कृतिक उपलब्धियों और उनकी राष्ट्रीय चेतना को सही परिप्रेक्ष्य में समझ सकते हैं। प्रोफेसर लूणिया के इस अत्यंत प्रखर क्षेत्रीय दृष्टिकोण के निर्माण और विकास के मूल में नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ के संस्थापक और भारत के प्रकांड इतिहास–विद्वान महाराज कुमार रघुवीर सिंह जी का अत्यंत गहरा और प्रेरणादायी प्रभाव विद्यमान था। महाराज कुमार रघुवीर सिंह जी मालवा के इतिहास के परम मर्मज्ञ थे, वे लूणिया जी की अकादमिक प्रतिभा और शोध के प्रति उनके समर्पण को भली–भांति पहचानते थे। वे लूणिया जी को अत्यंत स्नेह और आत्मीयता से 'भंवरलाल' कहकर संबोधित करते थे और उनके भीतर इतिहास के प्रति छिपी हुई मेधा को निरंतर एक नई दिशा प्रदान करते थे। महाराज कुमार का लूणिया जी के लिए यह स्पष्ट और कड़ा निर्देश था कि ''भंवरलाल, तुम अपने विद्यार्थियों को मालवा के इतिहास के लिए तैयार करो, केवल गप्पबाजी से काम नहीं चलेगा''। एक सच्चे विद्या–साधक की भांति अपने गुरु के इस गंभीर वैचारिक आदेश को लूणिया जी ने अपने संपूर्ण अकादमिक जीवन और शोध–निर्देशन का परम ध्येय बना लिया। प्रोफेसर लूणिया ने इस विचार को केवल अपने तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे अपनी कक्षाओं में अपने विद्यार्थियों के अंतर्मन में अत्यंत गहराई तक रोप दिया। उन्होंने विद्यार्थियों के मन में यह बात सुदृढ़ कर दी थी कि मालवा का इतिहास केवल कुछ राजाओं के मध्य लड़े गए युद्धों का साधारण इतिहास नहीं है, बल्कि यह महान कला, उच्च कोटि के साहित्य, सहिष्णु धर्म और प्रखर राष्ट्रीय प्रतिरोध की एक अत्यंत अद्भुत और प्रेरणादायी गाथा है, जिसे दुनिया के सामने लाया जाना शेष है। अपने इसी वैचारिक दर्शन को धरातल पर उतारने के लिए,

लूणिया जी ने विद्यार्थियों को क्षेत्रीय इतिहास की वास्तविक आत्मा से जोड़ने हेतु मालवी भाषा और स्थानीय बोलियों का गहन अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया। वे भली–भांति जानते थे कि जब तक शोधार्थी स्थानीय भाषा के माधुर्य और उसके मर्म को नहीं समझेगा, तब तक वह क्षेत्रीय ऐतिहासिक लोक–साहित्य और लोक–परंपराओं में निहित वास्तविक ऐतिहासिक तथ्यों का सही मूल्यांकन नहीं कर सकेगा। इसके अतिरिक्त, उनका यह मानना था कि क्षेत्रीय इतिहास का ज्ञान केवल चारदीवारी और पुस्तकालयों तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करने के लिए वे उन्हें मांडव, धार और महिदपुर जैसे ऐतिहासिक और पुरातात्विक स्थलों के भ्रमण पर ले जाते थे, जिससे वे मालवा की भौगोलिक संरचना और प्राचीन वास्तुकला को साक्षात् समझ सकें और यह जान सकें कि भूगोल ने किस प्रकार यहाँ की राजनीति, व्यापार और संस्कृति को युगों–युगों तक प्रभावित किया है।

3. 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का पुनर्मूल्यांकन (मालवा के विशेष संदर्भ में)

भारतीय इतिहास–लेखन में सन् 1857 की घटनाओं का मूल्यांकन सदैव एक अत्यंत जटिल और विवादास्पद विषय रहा है। साम्राज्यवादी और औपनिवेशिक इतिहासकारों ने एक लंबे समय तक 1857 की क्रांति को मात्र 'सिपाही विद्रोह' या सामंतों के असंतोष के रूप में प्रचारित किया था, ताकि इसके पीछे छिपी व्यापक राष्ट्रीय भावना और जन–भागीदारी को नकारा जा सके। परंतु, प्रोफेसर बी.एन. लूणिया ने अपने अकादमिक शोध और प्राथमिक साक्ष्यों के आधार पर इस औपनिवेशिक आख्यान को पूरी तरह से निरस्त कर दिया। उन्होंने 1857 के विद्रोह को केवल एक क्षणिक सैन्य घटना या सत्ता–संघर्ष न मानकर, आधुनिक भारत में राष्ट्रीय चेतना के उदय और स्वतंत्रता यात्रा की शुरुआत का ऐतिहासिक प्रतीक सिद्ध किया।

प्रो. लूणिया का यह स्पष्ट मत था कि क्षेत्रीय इतिहास को कल्पना या अनुमान के बजाय ठोस पुरालेखीय साक्ष्यों पर खड़ा किया जाना चाहिए। वर्ष 1952 ई. में जब मध्य भारत सरकार ने स्वतंत्रता संग्राम का प्रामाणिक इतिहास लिखने हेतु 'स्टेट हिस्ट्री कमेटी' का गठन किया, तब प्रो. लूणिया को दक्षिणी प्रभाग का 'डिवीजनल ऑफिसर' नियुक्त किया गया। उन्होंने ग्वालियर, इंदौर, देवास, धार और बड़वानी जैसी रियासतों के तहखानों में दशकों से उपेक्षित पड़े सरकारी पत्रों, दैनिक डायरियों और अदालती मुकदमों के विवरणों को खोज निकाला। इनमें से अधिकांश पत्राचार 'मोड़ी लिपि' और मराठी भाषा में था, जिसका उन्होंने अत्यंत सावधानीपूर्वक अंग्रेजी और हिंदी में अनुवाद करवाया, ताकि दस्तावेजों का मूल स्वरूप अक्षुण्ण रहे। इन्ही विस्मृत साक्ष्यों के आधार पर उन्होंने वर्ष 1957 ई. में ''फेजेस ऑफ फ्रीडम–स्ट्रगल इन मध्य भारत 1857'' नामक कालजयी ग्रंथ का संपादन किया। अपने ऐतिहासिक शोध–पत्रों और ग्रंथों के माध्यम से लूणिया जी ने मालवा को 1857 की घटनाओं के संदर्भ में एक निष्क्रिय या सीमांत क्षेत्र के स्थान पर एक सक्रिय, संगठित और सतत प्रतिरोध का केंद्र सिद्ध किया। उन्होंने अपने शोध–पत्र *The Siege of Dhar* (*Oct-* 1857) में धार को विद्रोह के एक प्रमुख केंद्र के रूप में रेखांकित किया और स्पष्ट किया कि यहाँ स्थानीय शासकों तथा जनसमर्थन की संगठित भूमिका विद्यमान थी। इसी प्रकार, ''*Mahidpur in* 1857'' में उन्होंने मालवा के सूक्ष्म इतिहास को राष्ट्रीय इतिहास से जोड़ने का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह, धार के दीवान और राघोगढ़ के प्रमुखों की सक्रिय भूमिका को उजागर कर यह प्रमाणित किया कि मालवा में विद्रोह का नेतृत्व

सैन्य छावनियों से निकलकर स्थानीय शासकों के हाथों में आ गया था। आधुनिक इतिहास–लेखन में जिसे 'सबाल्टर्न हिस्ट्री' (नीचे से ऊपर का इतिहास) कहा जाता है, प्रो. लूणिया ने उसे दशकों पूर्व ही अपने शोध का हिस्सा बना लिया था। उन्होंने मुख्यधारा के इतिहास में उपेक्षित जनजातीय विमर्श को केंद्र में लाते हुए यह स्थापित किया कि मालवा और निमाड़ के वनों में रहने वाली भील, भिलाला, नायक और भामर जैसी जनजातियों ने ब्रिटिश सत्ता को कड़ी चुनौती दी थी। उन्होंने बंजारों द्वारा विद्रोहियों को रसद पहुँचाने और आम जनता द्वारा परोक्ष समर्थन देने के तथ्यों को उजागर कर यह सिद्ध किया कि 1857 का संग्राम मालवा में एक 'जन–आंदोलन' का रूप ले चुका था। इसके अतिरिक्त, उन्होंने मंदसौर में फिरोजशाह, हीरासिंह और सआदत खान जैसे नेताओं के संघर्ष का उदाहरण देकर उस काल के असाधारण हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिक सौहार्द को भी प्रमुखता से रेखांकित किया।

एक प्रामाणिक इतिहासकार के रूप में प्रो. लूणिया का दृष्टिकोण अत्यंत वस्तुनिष्ठ था। वे किसी भी राजघराने के महिमामंडन या अंध–राष्ट्रवाद से पूर्णतः मुक्त थे। उन्होंने महाराजा तुकोजीराव होलकर द्वितीय की भूमिका का अत्यंत बेबाक विश्लेषण करते हुए उनकी 'द्वैत नीति' को उजागर किया, जहाँ महाराजा एक ओर अंग्रेजों से वफादारी का दिखावा कर रहे थे, तो दूसरी ओर सआदत खान जैसे विद्रोहियों को अपने महल में शरण देकर परोक्ष समर्थन भी दे रहे थे। इसके साथ ही, लूणिया जी ने 1857 के विद्रोह की विफलताओं के कारणों जैसे केंद्रीय नेतृत्व का अभाव, सैन्य रणनीति की कमी और कुछ अराजक तत्वों द्वारा लूटपाट पर भी निर्भीकता से प्रकाश डाला। उन्होंने ब्रिटिश सेना और कर्नल डूरंड द्वारा किए गए अमानवीय अत्याचारों (सामूहिक हत्याकांड और फाँसी) को भी पूरी प्रमुखता से दर्ज किया। उनकी यह निष्पक्षता इस बात से सिद्ध होती है कि उन्होंने अपने ग्रंथ में 'म्यूटिनी', 'इन्सरेक्शन' और 'रिवोल्ट' जैसे शब्दों का अत्यंत संतुलित उपयोग किया, जो उन्हें एक सच्चा 'साक्ष्य–आधारित इतिहासकार' प्रमाणित करता है।

4. इतिहास–लेखन का लोकतंत्रीकरणः उपाश्रित और जन–केंद्रित इतिहास का समावेश

प्रोफेसर बी.एन. लूणिया ने इतिहास–लेखन की उस परंपरागत और संभ्रांतवादी परिपाटी को पूरी तरह से निरस्त कर दिया, जिसमें इतिहास को केवल राजवंशों, राजमहलों के षड्यंत्रों, संधियों और युद्धों की कथा माना जाता था। उनके ऐतिहासिक दर्शन के अनुसार, किसी भी महान राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके शासक वर्ग में नहीं, बल्कि जनसमुदाय के चरित्र, कार्यसंस्कृति और उसकी सभ्यतागत निरंतरता में निवास करती है। उन्होंने इतिहास के विषय–क्षेत्र का पूर्णतः लोकतंत्रीकरण करते हुए उसका केंद्र 'राजा' से हटाकर 'समाज' को बना दिया। उनका यह स्पष्ट मानना था कि हाशिए पर छूट गई सामाजिक संरचना, जनजीवन की समस्याएं, सांस्कृतिक परंपराएं और आर्थिक गतिविधियां ही किसी सभ्यता के वास्तविक इतिहास का निर्माण करती हैं। उन्होंने इतिहास को सत्ता के ऊंचे महलों से निकालकर आम समाज और संस्कृति के खुले प्रांगण में ला खड़ा किया, जिससे इतिहास–लेखन अधिक समावेशी और यथार्थवादी बन सका। आधुनिक इतिहास–लेखन में जिसे 'उपाश्रित इतिहास' या 'सबाल्टर्न हिस्ट्री' कहा जाता है, प्रो. लूणिया ने उसे दशकों पूर्व ही अपने शोध का अभिन्न अंग बना लिया था। उन्होंने उन वर्गों –दलित, वंचित, पिछड़े और उपेक्षित जनसमुदायों के प्रति गहरी ऐतिहासिक संवेदनशीलता प्रदर्शित की, जिन्हें मुख्यधारा के इतिहासकारों ने प्रायः हाशिए पर छोड़ दिया था। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्षेत्रीय अध्ययन में उन्होंने स्पष्ट रूप से यह स्थापित किया कि

मालवा और निमाड़ के वनों में निवास करने वाली भील, भिलाला, नायक और भामर जैसी जनजातियों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता को अत्यंत कड़ी चुनौती दी थी। उन्होंने बंजारों द्वारा विद्रोहियों को रसद पहुँचाने और आम ग्रामीण जनता के परोक्ष समर्थन जैसे विस्मृत तथ्यों को मुख्यधारा के इतिहास में स्थान दिलाकर उसे एक व्यापक 'जन–आंदोलन' सिद्ध किया। उनके इस जन–केंद्रित इतिहास–बोध में मालवा की साझी सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक सुधारों का भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने मध्यकालीन मालवा में चिश्ती और शत्तारी सूफी परंपराओं तथा हिंदू संस्कृति के अद्भुत समन्वय का गहन अध्ययन किया, जो समाज में धार्मिक सहिष्णुता और समरसता का प्रतीक था। इसके अतिरिक्त, उन्होंने महिलाओं की तत्कालीन स्थिति का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत करते हुए महिला शिक्षा, समान अधिकार और सामाजिक सम्मान को राष्ट्र–निर्माण की अनिवार्य शर्त माना। उनका यह प्रगतिशील दृष्टिकोण प्रमाणित करता है कि लूणिया जी का इतिहास–लेखन राष्ट्रवादी होते हुए भी एक 'जनकेंद्रित' दिशा लेता है, जहाँ अर्थव्यवस्था, संस्कृति और आम जन–जीवन राष्ट्रीय पहचान की निर्मिति में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं।

5. ऐतिहासिक प्रतिमान और अकादमिक विरासत का निर्माण

प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया का ऐतिहासिक योगदान केवल उनके द्वारा रचित ग्रंथों, शोध–पत्रों या पुस्तकालयों की शांत दीर्घाओं तक ही सीमित नहीं था, बल्कि उन्होंने अपने जीवनकाल में एक ऐसी सुदृढ़, वैज्ञानिक और प्रामाणिक अकादमिक विरासत का निर्माण किया, जिसने मध्य प्रदेश और मालवा के बौद्धिक परिदृश्य को स्थायी रूप से परिवर्तित कर दिया। एक उत्कृष्ट शिक्षाविद् और युगदृष्टा संस्था–निर्माता के रूप में उनका यह सुदृढ़ विश्वास था कि प्रगतिशील विचार तब तक स्थायी नहीं हो सकते, जब तक उन्हें एक ठोस संस्थागत स्वरूप प्रदान न किया जाए। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु शासकीय सेवा से निवृत्त होने के पश्चात वर्ष 1976 ई. में उन्होंने 'मालव शिशु विहार' और बाद में 'श्रीनाथ विद्यालय' की स्थापना की, जिसका मुख्य ध्येय समाज के आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों को उत्कृष्ट शिक्षा की मुख्यधारा से जोड़ना था। इसके अतिरिक्त, क्षेत्रीय इतिहास के विमर्श को विश्वविद्यालयों के परिसरों से निकालकर लोक–चेतना का अभिन्न अंग बनाने के लिए उन्होंने 'मालवा इतिहास परिषद' की स्थापना कर बौद्धिक संवाद को एक संस्थागत मंच प्रदान किया। एक सच्चे 'अकादमिक ऋषि' के रूप में प्रो. लूणिया की सबसे प्रखर और सशक्त विरासत उनकी वह अद्वितीय शिष्य–परंपरा है, जिसने अकादमिक और सामाजिक क्षेत्रों में उनके वैचारिक बीजों को एक विशाल वटवृक्ष के रूप में पल्लवित किया। उन्होंने अपने विद्यार्थियों में 'साक्ष्यों की प्रामाणिकता' और 'क्षेत्रीय इतिहास' के अन्वेषण की जो गहरी ललक पैदा की थी, उसका ही सुखद परिणाम था कि उनके सुयोग्य शिष्य डॉ. जे.सी. उपाध्याय ने अपने निर्देशन में 41 शोधार्थियों को पी.एच.डी. (विद्यावाचस्पति) की उपाधि प्रदान करवाई, जिनमें से 25 शोध कार्य विशुद्ध रूप से मालवा के क्षेत्रीय इतिहास पर ही केंद्रित थे। इसी गौरवशाली परंपरा में उनके एक अन्य मेधावी शिष्य डॉ. एस.के. भट्ट ने 'मुद्राशास्त्र' के अत्यंत जटिल क्षेत्र में वैश्विक ख्याति अर्जित की, जो लूणिया जी की उसी साक्ष्य–आधारित वैज्ञानिक शोध–दृष्टि का प्रतिफल था।

अकादमिक परिसरों को एक जीवंत और वैश्विक बौद्धिक वातावरण प्रदान करने के लिए प्रो. लूणिया ने अपने विद्यार्थियों का देश–विदेश के दिग्गज विद्वानों और साहित्यकारों से सीधा संवाद स्थापित करवाया। उन्होंने प्रख्यात इतिहासकार

डॉ. ए.एल. बाशम, कथाकार कमलेश्वर और व्यंग्यकार शरद जोशी जैसी शीर्षस्थ विभूतियों को महाविद्यालय के मंच पर आमंत्रित कर विद्यार्थियों के वैचारिक क्षितिज को अत्यंत व्यापक बना दिया। उनका यह निस्वार्थ त्याग और राष्ट्रप्रेम उनके उस ऐतिहासिक कृत्य से भी प्रमाणित होता है, जहाँ उन्होंने अपनी कालजयी पुस्तक 'भारतीय संस्कृति का उदय' के रूसी अनुवाद से प्राप्त रॉयल्टी (पारिश्रमिक) को रूस में अध्ययनरत आर्थिक रूप से कमजोर भारतीय छात्रों की सहायता हेतु दान कर दिया था। उनकी यह असीम मानवीय करुणा, तार्किक इतिहास–बोध और संस्थागत दूरदर्शिता ही वह अकादमिक विरासत है, जिसने मालवा के इतिहास–लेखन को एक स्वर्ण युग प्रदान किया और जो आज भी भावी शोधार्थियों के लिए एक शाश्वत प्रकाशस्तंभ बनी हुई है।

6. निष्कर्ष

उपर्युक्त विस्तृत, तार्किक और विश्लेषणात्मक विवेचन के आधार पर यह पूर्ण विश्वास और निष्पक्षता के साथ निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया का इतिहास–लेखन भारतीय ऐतिहासिक विमर्श में एक महान युग–परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है। उन्होंने अपने अकादमिक जीवन में यह अकाट्य रूप से सिद्ध कर दिया कि क्षेत्रीय अस्मिता और राष्ट्रीय चेतना कभी एक–दूसरे के विरोधी नहीं हो सकते, बल्कि वे एक–दूसरे के अनिवार्य पूरक हैं। उन्होंने इतिहास को औपनिवेशिक आख्यानों, ब्रिटिश कुतर्कों और संभ्रांतवादी चश्मे से मुक्त कर उसे एक अत्यंत जन–केंद्रित, साक्ष्य–आधारित और प्रगतिशील स्वरूप प्रदान किया। प्रो. लूणिया की सबसे बड़ी अकादमिक विजय यह रही कि उन्होंने मालवा के क्षेत्रीय इतिहास को केवल स्थानीय श्रुतियों या लोक–कथाओं के धुंधलके में खोने नहीं दिया। 'मोड़ी लिपि' के विस्मृत अभिलेखों, सरकारी डायरियों और प्राथमिक साक्ष्यों का अत्यंत सावधानीपूर्वक अन्वेषण करके उन्होंने यह प्रमाणित किया कि 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में मालवा की जनजातियों, जागीरदारों और आम जनता का संघर्ष किसी भी दृष्टि से राष्ट्रीय पटल के संघर्षों से कमतर नहीं था। महाराज कुमार रघुवीर सिंह जी से प्राप्त वैचारिक प्रेरणा को आत्मसात करते हुए उन्होंने क्षेत्रीय इतिहास का जिस वैज्ञानिक ढंग से 'राष्ट्रीयकरण' किया, वह आज भी शोधार्थियों के लिए एक सर्वोच्च मानक है।

एक 'अकादमिक ऋषि', उत्कृष्ट शिक्षाविद् और युगदृष्टा प्रशासक के रूप में उनकी विरासत केवल उनके द्वारा रचित कालजयी ग्रंथों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह उनके द्वारा स्थापित संस्थाओं (मालव शिशु विहार और श्रीनाथ विद्यालय) तथा उनके मेधावी शिष्यों की उस सुदीर्घ शृंखला में भी निरंतर जीवित है, जिसने मालवा के इतिहास–लेखन को नई ऊंचाइयों पर पहुँचाया। अंततः, प्रो. बी.एन. लूणिया का इतिहास–दर्शन हमें यह शाश्वत संदेश देता है कि अपनी माटी, अपनी संस्कृति और अपनी स्थानीय जड़ों के इतिहास को प्रामाणिकता के साथ जानना ही भविष्य के एक सुदृढ़ और स्वाभिमानी राष्ट्र–निर्माण की सबसे पहली सीढ़ी है।

➢ संदर्भ ग्रंथ

- लूणिया, बी. एन. (प्रकाशक). 'संकल्प (वार्षिक पत्रिका)'. शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर, मुद्रकः मॉडर्न प्रिंटर्स, 1974–1975।

- लूणिया, बी. एन. 'प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास (पुरातन प्रस्तरकाल से सन् 1206 तक)'. मानक बुक डिपो, 1969।
- लूणिया, बी. एन. 'भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास'. लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1966।
- लूणिया, बी. एन. 'मध्य भारत में विद्रोह (1857)'. स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश शासन, 2004।
- लूणिया, बी. एन. 'मराठा प्रभुत्व', खंड 1, 2, 3. लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1982।
- लूणिया, बी. एन. 'युग प्रवर्तक शिवाजी'. लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1982। लूणिया, बी. एन. 'आधुनिक भारतः जन–जीवन और संस्कृति'. कमल प्रकाशन, इंदौर, 1993।

- **अंग्रेजी पुस्तकें एवं जर्नल्स**
- *Dictionary of Martyrs: India's Freedom Struggle (1857-1947). Vol. 3, Indian Council of Historical Research and Ministry of Culture, Government of India, 2013.*
- *Luniya, B. N., editor. Phases of Freedom-Struggle in Madhya Bharat 1857. The Education Department, Government of Madhya Pradesh, 1957.*
- *Luniya, B. N. "The Siege of Dhar (Oct. 1857)." Proceedings of the Indian History Congress, vol. 19, 1956.*
- *Luniya, B. N. "Freedom Movement in Malwa." Dictionary of Martyrs: India's Freedom Struggle (1857-1947), Indian Council of Historical Research, 1957.*
- *Luniya, B. N. "Raja Bakhtawar Singh of Amjhera and The War of 1857." The Vikram (Journal of Vikram University, Ujjain), vol. I, no. 2, May 1957.*

- **साक्षात्कार एवं संस्थागत पत्रिकाएं**
- मालविका (वार्षिक पत्रिका), मालव शिशु विहार विद्यालय।
- उपाध्याय, जे. सी. (प्रो. बी.एन. लूणिया के शिष्य),व्यक्तिगत साक्षात्कार. साक्षात्कारकर्ताः राजेंद्र सिंह मेवाड़ा, डॉ. उपाध्याय का निवास स्थान, इंदौर, 2 नवंबर 2025।
- लूणिया, वीरेंद्र (बी.एन. लूणिया के पुत्र),व्यक्तिगत साक्षात्कार. साक्षात्कारकर्ताः राजेंद्र सिंह मेवाड़ा, मालव शिशु विहार विद्यालय, इंदौर, 5 नवंबर 2025।